परिवारवाद पर मुहर

अमेरिका यात्रा के दौरान बर्कले स्थित यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया में राहुल गांधी ने परिवारवाद की राजनीति का बचाव करते हुए जिस तरह उस पर मुहर लगाई और यहां तक कह दिया कि भारत ऐसे ही चलता है उससे उन्होंने जाने-अनजाने न केवल अपनी, बल्कि कांग्रेस और साथ ही भारतीय राजनीति की भी गलत छवि पेश करने का काम किया। यह आश्चर्यजनक है कि उन्होंने अखिलेश यादव, एमके स्टालिन और ऐसे ही कुछ अन्य नेताओं का उदाहरण देते हुए यह कहने में भी संकोच नहीं किया कि अभिषेक बच्चन और मुकेश अंबानी भी परिवारवाद का प्रतिनिधित्व करते हैं? उनको मानें तो इन्फोसिस में भी ऐसी ही परिपाटी की नींव पड़ चुकी है। ऐसा लगता है कि राहुल गांधी के लिए सिनेमा, उद्योग जगत और राजनीति में कोई फर्क नहीं या फिर वह एक राजनेता के तौर पर अपने को उतना ही जवाबदेह मानते हैं जितना कि सिनेमा और उद्योग जगत के लोगों को। यह समझना कठिन है कि वह यह क्यों नहीं देख सके कि राजनीति में तमाम नेता ऐसे हैं जो परिवारवाद के बगैर अपनी जगह बनाने और छाप छोड़ने में सफल रहे हैं। अगर उन्हें परिवारवाद पर मुहर लगानी ही थी तो फिर वह अभी तक कांग्रेस के कार्यकर्ताओं और विशेष रूप से युवा कार्यकर्ताओं के समक्ष यह दावा क्यों कर रहे थे कि उनका लक्ष्य युवाओं को राजनीति में आगे लाने और उन्हें अवसर उपलब्ध कराने का है? कम से कम उन्हें तो यह याद होना चाहिए कि इसके लिए उन्होंने विधिवत एक अभियान भी छेड़ा था। क्या यह मान लिया जाए कि उन्होंने इस अभियान का परित्याग करने के साथ ही परिवारवाद की राजनीति के समक्ष हथियार डाल दिए हैं? जो भी हो, उन्होंने परिवारवाद की वकालत करके उन युवा कांग्रेसी नेताओं को निराश करने का ही काम किया जो पार्टी में आगे बढ़ने की लालसा रखते हैं और यह उम्मीद लगाए हैं कि पार्टी उपाध्यक्ष इसमें उनके मददगार साबित होंगे।

राहुल गांधी ने अपने संबोधन में अन्य अनेक मसलों पर भी अपने विचार व्यक्त किए, लेकिन ऐसा लगता है कि उन्हें यह ख्याल नहीं रहा कि अमेरिका में वह भारत का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं, न कि केवल कांग्रेस का। उन्होंने कश्मीर को लेकर पूछे गए एक सवाल के जवाब में जिस तरह यह साबित करने की कोशिश की कि नरेंद्र मोदी ने पीडीपी से हाथ मिलाकर कश्मीर को संकट में डालने का काम किया उससे तो ऐसा लगता है कि यह तय करने का अधिकार केवल कांग्रेस को है कि किसी राज्य में कोई राजनीतिक दल किसे अपना सहयोगी बनाए और किसे नहीं? यदि जम्मू-कश्मीर में कांग्रेस अपनी राजनीतिक सुविधा और आवश्यकता के हिसाब से पीडीपी अथवा नेशनल कांफ्रेंस से हाथ मिला सकती है तो यही काम भाजपा क्यों नहीं कर सकती? यह मान्यता तो एक तरह से सामंती सोच का परिचायक है कि जो कांग्रेस कर सकती है वह दूसरे दल नहीं कर सकते। राहुल गांधी विपक्ष की नेता की हैसियत से मोदी सरकार के बारे में अपने हिसाब से अपनी बात कहने के अधिकारी हैं, लेकिन बेहतर होगा कि वह राष्ट्रीय महत्व के मसलों पर देश और विशेष रूप से विदेश में विचार व्यक्त करते समय और अधिक सतर्कता एवं परिपक्वता का परिचय दें।

कर्ज मुक्त कृषक

कई वर्षों से कर्ज के बोझ तले दबकर भुखमरी और आत्मघात के शिकार हो रहे छोटे व मंझोले किसानों के जख्मों पर सरकार मरहम लगा रही है। कर्ज माफी या फसल ऋण मोचन योजना चुनावी घोषणा पत्र से निकलकर अब हकीकत में साकार हो रही है। इसकी जितनी प्रशंसा की जाए कम है लेकिन, यह भी देखना जरूरी होगा कि दोबारा यह स्थिति न आए। यह देखना सुखद है कि कर्ज माफी योजनांतर्गत पात्र पाए गए किसानों को ऋण मोचन प्रमाण पत्र कैंप तथा पखवाड़ा आयोजित कर निरंतर वितरित किए जा रहे हैं। योजना के पहले चरण में प्रदेश में कुल 7,371 करोड़ रुपये की धनराशि पात्र पाए गए कुल 11,93,224 किसानों के ऋण खातों में भेजी जा चुकी है। कुछ जिलों में आयोजित कैंपों में अत्यधिक कम धनराशि के ऋण-मोचन प्रमाण पत्रों के वितरण के सम्बन्ध में भ्रम की स्थिति जरूर पैदा हुई है। पात्र किसानों के ऋण खातों में न केवल ऋण की धनराशि मोचित की गई है, बल्कि किसानों द्वारा ऋण के प्रति भुगतान की गई धनराशि को घटाने के बाद, उस पर बचे ब्याज का भी एक लाख रुपये की सीमा तक मोचन योजना में निर्धारित मानदंडों के अनुसार किया गया है।

कर्जमाफी किसानों की हिम्मत बंधाने का उपक्रम है। इसकी जितनी भी प्रशंसा की जाए, वह कम ही होगी

निश्चित रूप से किसानों की कर्जमाफी राज्य सरकार द्वारा देर से उठाया गया एक ऐसा कदम है जिससे न केवल किसान लुटने-पिटने से बचेगा बल्कि खुदकुशी जैसी अवांछित घटनाएं भी थमेंगी। कर्जमाफी के बाद किसान अनेकानेक उन चिंताओं से मुक्त हो सकेंगे जिनके चलते वह खेती-किसानी में पर्याप्त मन नहीं लगा पा रहे थे। कर्जदार किसानों में बड़ी संख्या बुंदेलखंड की है जहां कभी सूखा तो कभी अतिवृष्टि के चलते कई वर्षों से फसल चौपट होती आ रही है। वास्तव में कर्जमाफी किसानों की हिम्मत बंधाने का उपक्रम है। इसकी जितनी भी प्रशंसा की जाए, वह कम ही होगी लेकिन, यह मान लेना कि किसानों की समस्या इसे पूरी तरह निदान हो जाएगा, भूल होगी। भरोसा किया जाना चाहिए कि भविष्य में भी सरकार किसान हित में कदम उठाने से पीछे नहीं रहेगी। उसे किसानों की फसल का वाजिब मूल्य दिलाने, खेती की लागत कम करने और किसानों के लिए लाभदायक बनाने के लिए भी कदम उठाने होंगे। कर्जमाफी के बाद किसानों की दृष्टि अब सरकार के ऐसे ही कदमों पर होगी। उम्मीद है उसे निराश नहीं होना पड़ेगा।

कह के रहेंगे
माधव जोशी

जागरण जनमत
कल का परिणाम

क्या रेयान इंटरनेशनल स्कूल के छात्र प्रद्युम्न की हत्या की सीबीआइ जांच होनी चाहिए?

आज का सवाल
क्या आप राहुल गांधी के इस बयान से सहमत हैं कि भारत वंशवाद से चल रहा है?

अपनी राय और अधिक लोगों तक पहुंचाने के लिए अपने मोबाइल के मैसेज बॉक्स में जाकर **POLL** लिखें, स्पेस देकर **Y, N** या **C** लिखकर 57272 पर भेजें
Y -हां, **N**-नहीं, **C**-कह नहीं सकते

परिणाम एसएमएस से प्राप्त नतीजों के साथ जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है। सभी आंकड़े प्रतिशत में।

सुधार के इंतजार में न्यायिक तंत्र

डॉ. एके वर्मा

यह ठीक नहीं है कि गुरमीत सिंह को सजा दिलाने के लिए पीड़िता को 15 वर्ष और मुंबई धमाकों के अभियुक्तों की सजा के लिए देश को 24 वर्ष इंतजार करना पड़ा

अदालतों द्वारा तीन तलाक को खत्म करने, निजता को मौलिक अधिकार बनाने, डेरा सच्चा सौदा के दुष्कर्मी बाबा को कारावास की सजा देने और मुंबई बम धमाकों के आरोपियों को सजा सुनाने के मामले से जुड़े कई निर्णयों को जनता ने सराहा है, लेकिन गुरमीत सिंह को सलाखों के पीछे देखने के लिए पीड़िता को 15 वर्ष और मुंबई बम-धमाकों के अभियुक्तों की सजा के लिए देश को 24 वर्ष इंतजार करना पड़ा। असंख्य मुकदमों में अंतिम निर्णय बहुत देर से आते हैं। आज जब अनेक संवैधानिक संस्थाओं में गिरावट आ रही है तब भी जनता का विश्वास अदालतों पर बना हुआ है। इसका मतलब यह नहीं कि अदालतों में सब कुछ ठीक-ठाक है। आज अदालतों की सबसे बड़ी समस्या भ्रष्टाचार के अतिरिक्त लंबी, खर्चीली न्यायिक प्रक्रिया और फैसलों में होने वाली देरी है। इससे सबसे ज्यादा गरीब और किसान प्रभावित होते हैं जिन्हें गांव से शहर आने में समय, श्रम और पैसा गंवाना पड़ता है। आज भी अदालतों का दृश्य अंग्रेजों के जमाने के मुकाबले कुछ ज्यादा नहीं बदला, बल्कि कुछ और बिगड़ गया है जहां वादी-प्रतिवादी न्याय पाने के लिए अदालतों की ओर हसरत भरी निगाहों से देखते रहते हैं। न्याय की गुहार लगाने वालों का ऐसा बुरा हाल क्यों है? इसके लिए कौन जिम्मेदार है?

लगभग 2.70 करोड़ मुकदमे न्यायालयों में लंबित हैं जिनमें लगभग 60 हजार सर्वोच्च न्यायालय में, 38 लाख उच्च-न्यायालयों में और 2.30 करोड़ जिला और अधीनस्थ न्यायालयों में विचाराधीन हैं। अप्रैल 2016 में सर्वोच्च न्यायालय के तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश तीरथ सिंह ठाकुर प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के सामने इस बात को लेकर भावुक हो गए थे कि केंद्र सरकार न्यायालयों में न्यायाधीशों की नियुक्तियां करने और उनकी संख्या बढ़ाने के लिए कुछ नहीं कर रही है। उनके अनुसार उच्च-न्यायालयों में 434 न्यायाधीशों के पद रिक्त हैं। जेल में अभियुक्तों को रखने की जगह कम पड़ रही है और केवल इलाहाबाद उच्च-न्यायालय में ही 10 लाख मुकदमे लंबित हैं। न्यायमूर्ति ठाकुर के अनुसार देश में हर वर्ष अदालतों में पांच करोड़ मुकदमे दर्ज होते हैं और केवल दो करोड़ ही निपट पाते हैं। 1987 में विधि आयोग ने 40 हजार न्यायाधीशों की नियुक्ति को लेकर सिफारिश की थी और तब से देश की जनसंख्या में 25 करोड़ आबादी और बढ़ गई है। इससे अदालतों पर बोझ पहले से भी ज्यादा बढ़ा है, लिहाजा उनके द्वारा मुकदमों का निपटारा भी देर से होता है। इन बातों में दम है और सरकार एवं न्यायपालिका को मिलकर इसे ठीक करना होगा, लेकिन देश भर में जिला, अधीनस्थ न्यायालयों में रिक्त 4,166 पदों पर भर्ती की जिम्मेदारी तो स्वयं उच्च-न्यायालयों की है जिनके प्रतिवेदन पर राज्यपाल किसी राज्य में जिला-न्यायालय और अधीनस्थ न्यायालयों में नियुक्तियां करते हैं। फिर उनमें देरी क्यों? बहरहाल क्या इन नियुक्तियों मात्र से ही समस्या का समाधान हो जाएगा? या कुछ और भी मुद्दे हैं जिन्हें ठीक करना पड़ेगा? पहली समस्या न्यायिक प्रशासन की है। निचली अदालतों में न्यायिक प्रशासन को दुरुस्त करने की बहुत आवश्यकता है।

अवधेश राजपूत

न्यायालयों का रख-रखाव, उसके संसाधन, वादी-प्रतिवादियों को न्यायालय परिसर में वांछित सुविधाएं और अधिवक्ताओं पर नियंत्रण आदि अनेक ऐसी जरूरतें हैं जिनके लिए प्रत्येक जिले में एक अभिकरण होना चाहिए जिससे अदालतों में मूलभूत सुविधाएं मुहैया कराई जा सकें और न्यायालय परिसर और आसपास की जगह को अराजकता से बचाया जा सके। इससे अदालतों की दक्षता पर भी सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा। संसद को कानून बना कर ऐसी व्यवस्था करनी चाहिए। दूसरी समस्या दीवानी और फौजदारी मुकदमों की प्रक्रिया से संबंधित है। अनेक ऐसे मुकदमे हैं जहां न्याय तब मिलता है जब अभियुक्त सजा की अवधि लगभग काट चुका होता है या दीवानी मामलों में जब निर्णय अप्रासंगिक हो जाता है जैसे दिल्ली हाईकोर्ट ने 2014 में 85 वर्ष के वृद्ध को 32 वर्ष की मुकदमेबाजी के बाद तलाक की इजाजत दी। जमीन संबंधी अनेक दीवानी मुकदमों में दूसरी या कभी तीसरी पीढ़ी को अंतिम निर्णय मिलता है। कुछ कमियां कानून में भी हैं जिनका दुरुपयोग होता है। हालांकि 'कोड-ऑफ-सिविल-प्रोसीजर' में 1999 में संशोधन करके केवल तीन बार 'तारीख' देने की व्यवस्था की गई, लेकिन 2005 में सर्वोच्च न्यायालय ने 'सलेम-अधिवक्ता-बार-एसोसिएशन' मामले में इसकी यह व्याख्या की कि इससे न्यायालय द्वारा तीन से अधिक तारीख देने के अधिकार पर अंकुश नहीं लगता। फिर तो राज्यों के उच्च-न्यायालयों ने तारीख देने के अपने अप्रतिबंधित अधिकार का भरपूर प्रयोग किया। तारीख देते समय न्यायाधीश इस बात का ध्यान नहीं रखते कि अगली तारीख को उनका कितना व्यस्त कार्यक्रम है, न इस बात का कि इससे गरीब वादी या प्रतिवादी को कितनी असुविधा होगी? क्यों न तारीख लेने वाले से इतना कड़ा दंडात्मक 'हर्जाना' लिया जाता कि मुकदमे को लंबा खींचने की प्रवृत्ति पर विराम लग सके? सिंगापुर का उदाहरण लिया जा सकता है जहां न्यायालय में लगने वाले दिनों के हिसाब से वादी या प्रतिवादी से 'टैक्स' लिया जाता है जिससे कम दिनों में ही मुकदमा निपट सके। मुकदमों के निपटान में देरी से विदेशी निवेशक भी कतराते हैं कि वे व्यापार करें कि मुकदमा लड़ें? अधिवक्ताओं का दृष्टिकोण भी मुकदमों में देरी के लिए उत्तरदायी है। एक अध्ययन के अनुसार 81.6 प्रतिशत वकील और 18.4 प्रतिशत न्यायाधीश देरी के लिए जिम्मेदार हैं, लगभग 60 प्रतिशत मुकदमों में वकील 4 से 10 बार तारीख लेते हैं। सिविल प्रोसीजर कोड की संशोधित धारा 35बी (भाग-1) के अनुसार अदालतें तारीख लेने पर कोई भी धनराशि हर्जाने के रूप में ले सकती हैं पर दिल्ली उच्च-न्यायालय ने केवल 2 प्रतिशत मुकदमों में ही ऐसा हर्जाना लगाया और तीन बार से ज्यादा तारीख लेने पर केवल 20 प्रतिशत मुकदमों में ही हर्जाना वसूल किया। कुछ अधिवक्ता एक से ज्यादा जिलों में खुद को अधिवक्ता के रूप में पंजीकृत करा लेते हैं और अपने व्यावसायिक हितों के कारण तारीख पर तारीख लेते रहते हैं। अनेक अवसरों पर न्यायालय परिसर में अधिवक्ता कानून को भी अपने हाथ में लेने की कोशिश करते हैं। कहां है 'बार कौंसिल ऑफ इंडिया?

कुछ 'फास्ट-ट्रैक' अदालतें महिलाओं से संबंधित मुकदमों के लिए बनाई जरूर गई हैं, पर छोटी-मोटी वजहों से 92 प्रतिशत मुकदमों में 'ट्रायल' भी नहीं हो पाया है। अदालतों में भ्रष्टाचार एक ऐसा मुद्दा है जिसमें 'अदालती अवमानना' के डर से कोई नहीं बोलता। इसलिए उसका समाधान स्वयं न्यायपालिका को ही ढूंढना होगा। इससे समाज में स्व-नियुक्त समानांतर न्यायिक संस्थाएं-संगठन और खाप-पंचायतें पनप रहीं हैं। क्या यह संकेत नहीं कि लोगों का न्यायपालिका पर भरोसा डगमगा रहा है? जरूरत है कि न्याय को सुलभ, सस्ता और न्यायिक-प्रक्रिया को जनोन्मुखी बनाने के लिए कानूनों के साथ-साथ न्यायपालिका में संगठनात्मक, प्रक्रियात्मक, प्रशासनिक तथा सांस्कृतिक बदलाव किया जाए जिससे जनता को अदालतों में होने वाले उत्पीड़न से बचाया जा सके।

(लेखक सेंटर फॉर द स्टडी ऑफ सोसायटी एंड पॉलिटिक्स के निदेशक एवं राजनीतिक विश्लेषक हैं)

response@jagran.com

बच्चों की सुरक्षा का बड़ा सवाल

राजीव चंद्रशेखर

रेयान प्रकरण बताता है कि स्कूल में बच्चों के साथ होने वाले अपराधों में स्कूल प्रबंधन जिम्मेदारी से मुक्त नहीं हो सकता

सबसे खौफनाक अपराध वे होते हैं जिनमें बच्चों को निशाना बनाया जाता है। ये अपराध तब और गंभीर दिखने लगते हैं जब वे स्कूलों में होते हैं। गुरुग्राम के नामी रेयान इंटरनेशनल स्कूल में कुछ दिन पहले सात वर्षीय बच्चे की निर्मम हत्या से देश भर में चिंता की लहर देखी जा सकती है। इसी समूह के स्कूल में लगातार दूसरे साल फिर से एक बच्चे की मौत कई सवाल खड़े करती है। 2016 में रेयान इंटरनेशनल स्कूल के वसंत कुंज, दिल्ली परिसर में पानी के टैंक में एक स्कूली छात्र की लाश मिली थी। गुरुग्राम के रेयान स्कूल की घटना पर यह समझना कठिन है कि आखिर बस कंडक्टर को स्कूल के अंदर और खासकर बच्चों के टॉयलेट वाले स्थान तक आने की अनुमति कैसे मिली? स्कूल प्रबंधन ने पिछले साल हुई मौत से कोई सबक क्यों नहीं लिया? इस सबके बीच कुछ पुराने सवाल आज भी अनुत्तरित हैं-जैसे कि निजी स्कूलों में राज्य सरकार के शिक्षा विभाग ने अब तक क्या जांच-परख की और बच्चों की सुरक्षा को लेकर किस प्रकार के दिशा-निर्देश जारी किए गए हैं? स्कूलों में बच्चों की सलामती की फिक्र करना क्या सिर्फ सरकार की ही प्राथमिकता है? अगर नहीं तो क्यों नहीं? प्राइवेट स्कूल जिनका सुरक्षा के मोर्चे पर बेहद लचर रिकॉर्ड रहा है उन्हें अभी तक अपने किए की सजा नहीं मिली है और वे पुराने ढर्रे पर ही चल रहे हैं।

प्रोटेक्ट अवर चिल्ड्रन यानी बच्चों की सुरक्षा नाम से एक मुहिम मैंने 2014 में तब शुरू की थी जब एक पीड़ित छात्रा के अभिभावक ने मुझसे संपर्क किया था। एक नामी स्कूल में पढ़ने वाली इस छात्रा का स्कूल के एक ड्राइवर ने यौन उत्पीड़न किया था। मुझे याद है कि उस समय मेरे राज्य-कर्नाटक के गृह मंत्री ने यह बयान दिया था, 'अभिभावकों को किसने कहा था कि वे बच्चे को स्कूल भेजें?' आखिर पीड़ित बच्चे के माता-पिता को इस संवेदनहीन जवाब से कितनी पीड़ा पहुंची होगी? बहरहाल बच्चे के माता-पिता द्वारा न्याय पाने के दृढ़ निश्चय और शांतिपूर्ण तरीके से चल रही कार्रवाई ने मुझे इस मुहिम को शुरू करने के लिए प्रेरित किया। उस बच्ची के अभिभावकों ने यह तय कर लिया था कि वे अपनी बेटी को न्याय दिलाकर ही रहेंगे और सुनिश्चित करेंगे कि वह अपराधी अगली बार किसी और बच्चे की ओर नहीं देखे।

स्कूलों में बच्चों के साथ अपराध अथवा हादसे से लोगों के बीच आक्रोश फूटता है, पर कुछ महीनों बाद वैसा ही एक दूसरा हादसा हो जाता है। सवाल उठता है कि 'हम उन्हें रोकने के लिए क्या कर रहे हैं?' अब बदलाव

का वक्त आ गया है। स्कूलों में बच्चों के साथ हो रही घटनाओं-दुर्घटनाओं से यह उम्मीद नहीं की जा सकती कि एक दिन यह सब अपने आप शांत हो जाएगा।

बाल अपराध क्रूरता का सबसे भयंकर रूप है। स्कूल में बच्चे के साथ किया गया अपराध तो और भी भयंकर होता है, क्योंकि न सिर्फ अभिभावक, बल्कि बच्चे भी अपने स्कूल और शिक्षकों पर भरोसा रखते हैं। ऐसे अपराधों से यह विश्वास तार-तार हो जाता है। यह बहुत ही स्वाभाविक है कि इन अपराधों से अन्य अभिभावक भी खौफजदा हो जाते हैं और वे अपने बच्चों को स्कूल भेजने से डरते हैं। जाहिर है कि गुस्सा स्कूल प्रबंधन पर भी उतरेगा। यह बहुत ही शर्मनाक है कि जब अभिभावक घृणित अपराध में स्कूल प्रबंधन की जिम्मेदारी पर सवाल उठाते हुए विरोध प्रदर्शन कर रहे थे तो उन पर पुलिस द्वारा लाठीचार्ज जैसी कार्रवाई की गई।

हरियाणा सरकार को स्कूल प्रबंधन के लोगों को गिरफ्तार कर उनके विरुद्ध मुकदमा चलाना चाहिए। उन्हें कड़ी से कड़ी सजा देनी चाहिए और साथ ही उन पर जुर्माने के तौर पर अधिक से अधिक हर्जाना लगाना चाहिए। उनके खिलाफ कार्रवाई ऐसी मिसाल बननी चाहिए कि दूसरे लोग सबक सीखें। कानून का इतना डर होना जरूरी है, क्योंकि यह तो साफ है कि तमाम स्कूल बच्चों की सुरक्षा को लेकर गंभीर नहीं हैं। प्रत्येक स्कूल प्रबंधन तक यह बात पहुंचनी चाहिए कि सरकार इस मामले में गंभीर है। इससे ही भविष्य में ऐसे अपराधों पर अंकुश लगाया जा सकेगा। रेयान प्रकरण यही बताता है कि स्कूल प्रांगण में बच्चों के साथ होने वाले अपराधों के लिए स्कूल प्रबंधन ही जिम्मेदार माना जाना चाहिए।

यह केंद्र और राज्य सरकारों का दायित्व है कि वे स्कूल में बच्चों के साथ होने वाली अनहोनी रोकने के ठोस उपाय करें। सभी राज्य सरकारों को बच्चों की स्कूल में सुरक्षा का मुद्दा प्राथमिकता में रखना चाहिए। निजी स्कूलों को भी 'चलता है' वाले रवैये को छोड़कर जरूरत के मुताबिक अपने नियम बदलने चाहिए ताकि बच्चों की सुरक्षा सुनिश्चित हो। स्कूलों के लिए दिशानिर्देश एवं ऑडिट आवश्यक कर दिए जाने चाहिए। उनके लिए यह भी अनिवार्य बना दिया जाना चाहिए कि वे अपने स्कूल के स्टाफ की पृष्ठभूमि आवश्यक रूप से जांचें, क्योंकि स्कूल का स्टाफ बच्चों के काफी नजदीक होता है। पुलिसिया तौर भी काफी कुछ सुधारने की जरूरत है ताकि बच्चों के प्रति बढ़ते अपराधों को प्राथमिकता के आधार पर दर्ज किया जा सके और उनकी उचित जांच हो सके। बाल अदालतें बनाकर सुनिश्चित किया जाना चाहिए कि आरोपियों को जल्द से जल्द सलाखों के पीछे डाला जाए। बच्चों के साथ हो रहे अपराधों में आरोपियों का छूटकर बाहर आना इसलिए कहीं अधिक खतरनाक है, क्योंकि अधिकांश अपराधियों में फिर से अपराध करने की प्रवृत्ति होती है। चूंकि कानून दशकों पहले बनाए गए थे लिहाजा उनमें सुधार कर उन्हें अद्यतन करने की गुंजाइश है। बच्चों की सुरक्षा का मुद्दा बहुत महत्वपूर्ण है और इस संबंध में कुछ ठोस किया जाना जरूरी है।

मैं प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी एवं सभी राज्यों के मुख्यमंत्रियों से निवेदन करता हूं कि समय की इस मांग को समझते हुए आगामी पीढ़ियों पर मंडराते हुए खतरे को जल्द से जल्द भांप लें और यह सुनिश्चित करें कि हमारे स्कूल बच्चों के लिए सुरक्षित स्थान बनें। यही हमारा राष्ट्रीय मिशन होना चाहिए। हम अपने बच्चों के प्रति उत्तरदायी हैं और चूंकि वे समाज का सबसे मासूम वर्ग हैं इसलिए हमें उन्हें भयमुक्त वातावरण प्रदान करना चाहिए।

(लेखक राज्यसभा सदस्य हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

प्रार्थना

प्रार्थना मनुष्य की आत्मा का भोजन है। इसे जीवन का अनिवार्य अंग होना चाहिए। आत्मबल की उपलब्धि इसके बिना संभव भी नहीं। प्रार्थना मानव जीवन का सर्वाधिक सशक्त व सूक्ष्म एक ऐसा ऊर्जा-स्रोत है जिसे कोई भी उत्पादित-अभिवर्धित करके अपने को प्राणवान और प्रतिभा संपन्न व्यक्तियों की श्रेणी में सम्मिलित कर सकता है। हमारी अभिलाषाओं की पूर्ति के लिए ऋषियों ने तीन प्रकार के मार्ग चयनित किए हैं-कर्म, चिंतन और प्रार्थना। तीनों के समन्वित प्रयासों के माध्यम से ही जीवन लक्ष्य की प्राप्ति होती है। प्रायः देखा जाता है कि मनुष्य प्रथम दो मार्गों पर चलने का तो प्रयास करता है, परंतु अति महत्वपूर्ण प्रार्थना पक्ष को विस्मृत कर बैठता है। चिंतन और क्रिया के सामान्य जीवनक्रम से जुड़े रहने पर अपने अस्तित्व का वास्तविक ज्ञान आसानी से हो जाता है, पर विकृतियों को छुड़ाने के लिए प्रार्थना का ही सहयोग लेना पड़ता है। प्रार्थना को प्रभावशाली बनाना ही मनुष्य जीवन का लक्ष्य होना चाहिए। प्रार्थना के कुछ सामान्य नियम हैं-जीवन व्यापार के प्रत्येक क्षेत्र में प्रभु की साझेदारी को अति प्रमुखता देना।

इसके सहारे कर्तव्यों के प्रति जागरूकता बनी रहती है और दूरदर्शिता का विकास चलता रहता है। प्रभु की उपस्थिति का सतत् आभास प्रार्थना में होना चाहिए। यह प्रार्थना मानव जीवन को ऊंचा उठाती है। आत्मोत्कर्ष के मार्ग में आगे-आगे कदम बढ़ा सकना कोई कठिन कार्य नहीं है। प्रार्थना में अंतःकरण की गहराई से प्रभु को पुकारिए, वह इतनी भावनापूर्ण हो जिससे प्रभुसत्ता का अनुदान, वरदान, स्नेह, सहयोग के रूप में टपकता-बरसता स्पष्ट दिखाई दे। अंतःकरण से की गई सच्ची पुकार को परमात्मा कभी अनसुनी नहीं करता। वह अपना परिचय अंतस चेतना में उठती सद्प्रेरणाओं, सद्भावनाओं के रूप में शीघ्र देता है। बाद में प्रत्यक्ष सहयोग-सहकार भी सर्वत्र बरसने लगता है। प्रार्थना के साथ दूसरों के कल्याण की भावना भी सन्निहित हो तभी उसका उत्तर प्राप्त होता है। समर्थ सत्ता के समक्ष अपनी इच्छा-आकांक्षा रखते समय इस बात का ध्यान रखें कि उसमें कहीं संकीर्ण स्वार्थपरता तो प्रवेश नहीं कर रही है। प्रार्थना का आखिरी सूत्र यह है कि अपना अनहित चाहने-सोचने वालों के प्रति भी सद्भावना का भाव बनाए रखना। उन्हें सन्मति मिले, इसकी प्रार्थना करना।

डॉ. विजय प्रकाश त्रिपाठी

पाठकनामा
pathaknama@nda .jagran.com

समस्या बनते रोहिंग्या मुसलमान

मजहबी रूप लेता मानवीय संकट शीर्षक से लिखे अपने लेख में राशिम सिद्दीकी ने देश-दुनिया के लिए समस्या बन रहे रोहिंग्या मुसलमानों के विषय में यह ठीक ही कहा है कि हिंसात्मक प्रवृत्ति और असभ्य जीवन-संस्कृति ही उनकी अपनी दुर्दशा के लिए जिम्मेदार है। वरना जिस म्यांमार में अपने हिंसात्मक विरोध के चलते रोहिंग्या मुसलमान एक समस्या बन गए हैं वहीं पर सभ्य तरीके से जीवनयापन करने वाले चीन से आए पंथय मुसलमानों से म्यांमार सरकार को कोई परेशानी नहीं है। क्योंकि वे म्यांमार के शांतिप्रिय बौद्ध समाज के साथ समरस होकर शांतिपूर्वक रह रहे हैं। आज इन रोहिंग्या मुसलमानों की बर्बरता के चलते मुस्लिम देश भी अपने इन धर्मजात भाइयों को शरण देने से कतरा रहे हैं। चूंकि भारत पहले से ही कश्मीर के जिहादी आतंक से लहूलुहान हो रहा है, इसलिए अब वह अपने शांतिप्रिय देश में अनधिकृत रूप से प्रवेश करने वाले हिंसक रोहिंग्या मुसलमानों के प्रति सदाशयता बरत कर दूसरा कश्मीर पैदा नहीं करना चाहता। ऐसे में दर-दर भटकने को मजबूर इन रोहिंग्या मुस्लिमों की समस्या का अब एक ही निदान है कि ये म्यांमार के पड़ोसी मुस्लिम देशों में शरण लेकर उस देश की सरकार को अपने शांतिप्रिय आचरण से यह आश्वस्त करें कि वे भविष्य में अपनी किसी मांग के लिए हिंसा का रास्ता अख्तियार नहीं करेंगे तथा उस देश के नागरिकों के साथ समरस होकर अपने जीवन स्तर को सुधारने का प्रयत्न करेंगे। रोहिंग्या मुस्लिम समुदाय की वकालत करने वाले मानवाधिकारवादियों को भी इनके हित में यही करना चाहिए कि वे इन्हें शरण देने के लिए मुस्लिम देशों को तैयार करें।

pandeyvp1960@gmail.com

डेरे में ड्रामा तो नहीं!

हरियाणा के सिरसा में बलात्कारी बाबा गुरमीत राम रहीम के विशाल डेरे की तलाशी बड़े तामझाम से हुई। सजा के दो सप्ताह बाद तलाशी लेना, बाबा की प्रिय हनीप्रीत को गायब होने का अवसर देना और डेरे में दबे असंख्य नर कंकालों को वैसे ही छोड़ देना सिवाय लीपापोती और ड्रामे के कुछ नहीं है। इसे देखते हुए लगता है कि जल्द ही राम रहीम फिर से जनता के बीच डंका बजाने आ सकता है। इस सबके पीछे सिर्फ और सिर्फ वोट बैंक की राजनीति काम कर रही है क्योंकि कुछ नेताओं के बयान और रुझान दोनों खुलकर गुरमीत के पक्ष में आ चुके हैं। यूपी के निठारी कांड में पंधेर और कोली को भी लोग शायद अभी भूले नहीं हैं जिसमे मानव अंगों के बड़े व्यापार हेतु बच्चों, महिलाओं और लोगों के नर कंकाल का भारी जखीरा मिला था।

vedmamurpur@gmail.com

दम तोड़ती इंसानियत

हमारे समाज में लोगों की मानसिकता इस कदर दूषित हो चुकी है कि एक मासूम के साथ दुष्कर्म करने, और हत्या करने में जरा भी नहीं झिझकते हैं। गुरुग्राम में प्रद्युम्न की हत्या मामले में आखिरकार जिम्मेदार कौन है स्कूल प्रशासन की लापरवाही या समाज में मरती इंसानियत? आए दिन लड़कियों से दुष्कर्म, मासूमों के साथ कुकृत्य, नौनिहालों की हत्या जैसी घटनाएं विकृत मानसिकता को बयां कर रही हैं। माता-पिता अपने बच्चों को स्कूल पढ़ने के लिए भेजते हैं ताकि बच्चे का भविष्य सुधरेगा और वह देश के विकास में सहयोग करेगा। और जब इसी विद्या के मंदिर में मासूमों से उनका बचपन और उनकी जिंदगी छीन ली जाए तो किस पर भरोसा किया जाए। गुरुग्राम में रेयान, गाजियाबाद में जीडी गोयनका, नोएडा में पार्थ स्कूल जैसी घटनाएं आए दिन स्कूलों की सुरक्षा व्यवस्था और लापरवाही का सबूत देती हैं। ऐसी स्थिति में हमारा कानून कब तक सोता रहेगा और कब तक माता-पिता अपने बच्चे यूं ही खोते रहेंगे?

chandni0895@gmail.com

संस्थाओं में शोषण

गुरुग्राम के एक निजी स्कूल में घटी दुःखद घटना से संबंधित दायर याचिका पर सुनवाई करते समय 11 सितंबर को सुप्रीम कोर्ट ने देश के सभी निजी स्कूलों की शिक्षा सुरक्षा प्रबंधन और गुणवत्ता पर कठोर प्रहार किया है। और प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा की रेगुलेटरी सरकारी संस्था के अलावा केंद्र एवं राज्य सरकार को तीन हफ्ते में जबाब देने को कहा है। सरकार द्वारा संचालित संस्थाओं के अलावा भी देश में बहुत सी पूर्ण स्वायत्त और अर्धसरकारी संस्थाएं भी कहीं मुफ्त तो कहीं बहुत कम शुल्क में छात्रों को प्राथमिक माध्यमिक शिक्षा प्रदान करती हैं। जिनमें छात्रों के साथ दुर्व्यवहार एवं यौन शोषण की घटनाओं की जानकारी मीडिया द्वारा समय-समय पर आती रहती है। गैर सहायता प्राप्त शिक्षण संस्थाओं की भी दशा जग जाहिर है। यूपी सरकार शिक्षा मित्रों को दस हजार मासिक अनुदान देना चाहती है जबकि कुछ गैर सरकारी सहायता प्रदत्त संस्थाएं तो मात्र छह सात हजार ही वेतन देती हैं जिनसे उनकी जरूरतें भी पूरी नहीं हो पाती हैं। जिस देश में अध्यापकों का ही मानसिक, आर्थिक व शारीरिक शोषण आम बात हो वहां शिक्षा की गुणवत्ता पर प्रश्न चिन्ह लगना स्वाभाविक है। मानव संसाधन मंत्री को गुरुग्राम की घटना पर रातभर नींद नहीं आई ऐसे में मंत्री जी को उन माता-पिता का दर्द का अहसास नहीं हुआ जो कहीं छात्र तो कहीं अध्यापक बनकर अन्याय, अपमान और दर्द सहते हैं। समाज में पान की पीक से कहीं ज्यादा गंदगी तो नेताओं के भाषण फैलाते हैं क्योंकि पान की पीक तो समय के साथ फीकी पड़ जाएगी, लेकिन नेताओं द्वारा फैलाया गया जहर तो देश की अखंडता के लिए खतरा बन जाता है।

kkrastogiji@gmail.com

ट्वीट-ट्वीट

2019 में देश का प्रधानमंत्री बनने का दिवास्वप्न देखने के बजाय राहुल जी को पहले अपनी कांग्रेस पार्टी की ही कमान संभालनी चाहिए। वह इस जिम्मेदारी से क्यों भाग रहे हैं।
महेश@MahiHerambha

भाजपा-आरएसएस के 17 प्रवक्ताओं, 11 केंद्रीय मंत्रियों और 8 राज्य मंत्रियों को यह बताने के लिए मोर्चे पर आगे आना पड़ा कि राहुल गांधी आखिर कैसे अप्रासंगिक हैं?
गौरव पांधी@GauravPandhi

अमेरिका में राहुल गांधी ने कहा कि वह मेक इन इंडिया का समर्थन करते हैं, लेकिन मोदी सरकार द्वारा बड़े उद्योगों को समर्थन के उलट इसके लिए उनका ध्यान पूरी तरह छोटे और मझोले उपक्रमों पर केंद्रित होगा।
सलमान अनीस सोज@SalmanSoz

सरकार ने बुलेट ट्रेन परियोजना को पूरा करने के लिए 15 अगस्त, 2022 की समयसीमा तय की है। इसे पांच साल में पूरा करना यकीनन एक बड़ी उपलब्धि होगी।
अखिलेश शर्मा@akhileshsharma1

पाकिस्तानी कब्जे वाले कश्मीर के 73 प्रतिशत लोग पाक से आजादी चाहते हैं। ऐसा सर्वेक्षण कराने वाले पाकिस्तानी अखबार के दफ्तर को सील कर दिया गया है।
मेजर गौरव आर्या@majorgauravarya

जनपथ

जाकर कैलीफोर्निया मुखर हुई आवाज,
समझ सको तो लो समझ कुछ बोले युवराज।
कुछ बोले युवराज कमी खुद की बतलाई,
भाषण में कमजोर कह गए खुद सच भाई।
करो बुद्धि को तेज जड़ी-बूटी कुछ खाकर,
तब भाषण दो आप विदेशों में फिर जाकर।
– ओमप्रकाश तिवारी

संस्थापक-स्व. पूर्णचन्द्र गुप्त. पूर्व प्रधान संपादक-स्व.नरेन्द्र मोहन. संपादकीय निदेशक-महेन्द्र मोहन गुप्त. प्रधान संपादक-संजय गुप्त, जागरण प्रकाशन लि. के लिए: नीतेन्द्र श्रीवास्तव द्वारा 501, आई.एन.एस. बिल्डिंग,रफी मार्ग, नई दिल्ली से प्रकाशित और उन्हीं के द्वारा डी-210, 211, सेक्टर-63 नोएडा से मुद्रित, संपादक (दिल्ली एनसीआर) -विष्णु प्रकाश त्रिपाठी*
दूरभाष : नई दिल्ली कार्यालय : 23359961-62, नोएडा कार्यालय : 0120-3915800, E-mail: delhi@nda.jagran.com, R.N.I. No 50755/90 *इस अंक में प्रकाशित समस्त समाचारों के चयन एवं संपादन हेतु पी.आर.बी. एक्ट के अंतर्गत उत्तरदायी। समस्त विवाद दिल्ली न्यायालय के अधीन ही होंगे। हवाई शुल्क अतिरिक्त।